Knowledge Consortium of Gujarat
Department of Higher Education - Government of Gujarat
Journal of Humanity
ISSN: 2279-0233

Year-2 | Issue-3 | Continuous issue-9 | November-December 2013

कलिकालसर्वज्ञ आचार्य हेमचन्द्र का 'अहिंसा'विचार – योगशास्त्र के संदर्भ में

जैनधर्म में मोक्षप्राप्तिहेतु सम्यक्-दर्शन और सम्यक्-चारित्र्य इन त्रिविध का समाहार आवश्यक माना है । 'मोक्षोपायो योगो ज्ञानश्रद्धानचरणात्मकः ।'

अर्थात्, ज्ञान, दर्शन, चारित्र्य तीनों मोक्ष के उपाय हैं । योगशास्त्र में उनका साङ्गोपाङ्ग प्रतिपादन है । योगशास्त्र में 12 प्रकाश है । श्लोकसंख्या 1012 है और उन पर हेमचन्द्राचार्य की स्वोपज्ञ व्याख्या है । चोलुक्यवंशभूषण श्री कुमारपाल राजा योगविद्या के अतीव जिज्ञासु थे । राजा के अत्यन्त आग्रह पर आचार्य हेमचन्द्रने योगशास्त्र की रचना की । महाभारतकार व्यासजी के समान आचार्यश्री योगशास्त्र को अनुष्टुप छन्द में रचते है । प्रारम्भ में योग की महिमा, उसकी गरिमा और उसकी साधना के फल और चमत्कारों का वर्णन करते है । हर जिज्ञासु साधक योगसाधना के प्रति आकृष्ट होकर अपने जीवन को तज्जन्य प्रवृत्ति में प्रवृत्त करता है । सम्यक् रूप में योगशास्त्र समुद्रवत् अर्थ-गम्भीर है, हिमालय की तरह आत्मा की सुरक्षा हेतु जाग्रत प्रहरी है, आध्यात्म का उपनिषद् एवं आध्यात्मज्ञान का विश्वकोश है । तो समष्टि के लिए मार्गदर्शक, समस्त विश्व को यथार्थ दिशादर्शन कराने वाला प्रकाश स्तम्भ है ।

कलिकालसर्वज्ञ आचार्य हेमचन्द्र योगशास्त्र में योग के साधन के रूप में सम्यक् चारित्र्य का निर्देश करते है । समस्त पापयुक्त व्यापारों का उन्मूलन चारित्र्य है । अहिंसादि पांच चारित्र्यों से साधक मोक्ष प्राप्त करता है । अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह – यह पांच महाव्रतों से चारित्र्यनिर्माण होता है । ये पांच महाव्रतों की प्रत्येक की पांच पांच भावनाएँ है । भावनाओं से महाव्रत दृढ होता है ।

आचार्य हेमचन्द्र ने प्रथम और द्वितीय प्रकाश में अहिंसा का प्रतिपादन किया । आचार्यश्री ने समय समय पर राजा कुमारपाल को धर्मप्रेरणा दी और धर्म-विमुखता से बचाया । परिणामस्वरूप गुजरात में अहिंसा का कार्य हुआ । कुमारपाल ने हिंसा पर प्रतिबन्ध लगाया था ।

अहिंसा महाव्रत का स्वरूप प्रतिपादित करते है –

न यत् प्रमादयोगेन जीवित-व्यपरोपणम् ।
त्रसाणां स्थावराणां च तदहिंसाव्रतं मतम् ।।

प्रमाद के योग से योग के किसी प्राणी के प्राणो का हनन करना हिंसा है तथा उसके विपरीत अहिंसा है । दोनों आचार्यो की परिभाषा समानर्थक है । प्रमाद का अर्थ है – अज्ञान, संशय, विपर्यय, राग, द्वेष, स्मृतिभ्रंश, मन-वचन-काय के प्रतिकूल आचरण करना ।

आचार्य हेमचन्द्र द्वितीय महाव्रत सत्य का स्वरूप निर्देश करते है –

प्रियं पथ्यं वचस्तथ्यं सूनृतव्रतमुच्यते ।
तत् तथ्यमपि नो तथ्यं अप्रियं चाहितं च यत् ।।

प्रिय, हितकारी तथा यथार्थ वचन ही सत्यव्रत कहा जाता है । किन्तु जो वचन अप्रिय या अहितकर है वह तथ्यवचन होने पर भी सत्यवचन नहीं कहलाता है । अमृषा स्वरूप सत्यवचन सूनृतव्रत कहलाता है । सुननेमात्र से जो आनन्द दे वह प्रिय वचन है और भविष्य में जो हितकारी हो वह पथ्य वचन है । यहां प्रिय और पथ्य विशेषणों का प्रयोजन ध्यानार्ह है ।

आचार्य हेमचन्द्र तृतीय महाव्रत अस्तेय की परिभाषा देते है –

अनादानमदत्तस्यास्तेयव्रत मुदीरितम् ।
बाह्यः प्राणो नृणामर्थो, हरता ते हता हिते ।।

अप्रदत्त वस्तु को ग्रहण करना अस्तेय महाव्रत है । धन मनुष्य का बाह्य प्राण है । उसके हरण से ही उसके प्राणो का भी हरण हो जाता है । स्वामी-अदत्त, जीव-अदत्त, तीर्थंकर-अदत्त एवं गुरु-अदत्त । अस्तेय का चार प्रकार है ।

आचार्य हेमचन्द्र चतुर्थ महाव्रत ब्रह्मचर्य के सम्बन्ध में कहते है –

दिव्यौदारिककामानां कृतानुमतिकारितैः ।
मनो-वाक्-कायतस्त्यागो, ब्रह्माष्टादशधा मतम् ।।

देवताओं के शरीर तथा मनुष्यजाति के औदारिक शरीर से सम्बन्धित कामोपभोग का मन, वचन और काया से कृत, कारित और अनुमोदित का सर्वथा त्याग ब्रह्मचर्य है । जिनके अठारह प्रकार है ।

आचार्य हेमचन्द्र पंचम महाव्रत अपरिग्रह की परिभाषा देते है -

सर्वभावेषु मूर्च्छायास्त्यागः स्यादपरिग्रहः ।
यसत्स्वपि जायेत, मूर्च्छया चित्तविप्लवः ।।

समस्त सजीव-निर्जीव पदार्थों पर आसक्ति का अभाव अपरिग्रह महाव्रत है । पदार्थों के उपस्थित न होने पर भी उनमें चित्त की आसक्ति से क्षोभ होता है ।

अहिंसादि पांच महाव्रतों की पांच पांच भावनाएँ है । इन महाव्रतों की भावना सहित आराधना करने वाले अवश्यमेव मोक्षपद प्राप्त करते है ।

अहिंसा महाव्रत की पांच भावना इस प्रकार है –

- मनोगुप्त – मन के अशुभ व्यापारों का परित्याग । सब से पहले सभी व्यापार-क्रिया मन में आकार लेती है । जब मन विशुद्ध हो तो हिंसा संभवित नहीं है ।
- एषणा समिति – आहार-पानी आदि का ग्रहण किसी जीव को दुःख पहुंचाकर न करना। समिति का अर्थ है – सम्यक् प्रवृत्ति ।
- आदानसमिति – पाद, पादपीठ, वस्त्र, पात्रादि उपकरण का उपयोग करने में जीव की हिंसा न हो इस प्रकार प्रवृत्ति करना ।
- ईयासमिति – रास्ते में आते जाते नीची और सम्यक् दृष्टि से गमनागमन करना ।
- द्रष्टान्नपान ग्रहण भावना – आहार-पानी समुचय से लेना और आहार के समय अहिंसा भाव रखना ।

आचार्य हेमचन्द्र अहिंसा का महिमागान करते हुए कहते है की अहिंसा मातृवत् समस्त प्राणीओं की हितकारी है । संसाररूपी मरुभूमि में अमृत बहाने वाली सरिता है । अहिंसा दुःखरूपी दावाग्नि को प्रशान्त करने हेतु बरसने वाली वर्षाऋतु की मेघघटा है तथा भवसागर भ्रमणरूपी व्याधि से पीडित जीवों के लिए अहिंसा परम औषधि है, जैसे पर्वतों में सुमेरु पर्वत, देवों में इन्द्र, मनुष्यों में चक्रवर्ती, ज्योतिषीओं में चन्द्र, वृक्षों में कल्पतरु, ग्रहों में सूर्य, जलाशयों में समुद्र, असुरों, सुरों और मनुष्यों में जिनेन्द्र है, वैसे सर्वव्रतों में अहिंसा सर्वोपरि है । [1]

अहिंसा महाव्रतपालक व्यक्ति जब दूसरे के आयुष्य को बढाता है तो यह निःसंदेह कहा जा सकता है कि उसे भी जन्म-जन्मान्तर में अधिक आयु मिलता है । दूसरे के रूप का रक्षण करने से वह स्वयमेव उत्तम रूप पाता है । दूसरों को अस्वस्थ बना देनेवाली हिंसा का त्याग करके जब दूसरों को स्वस्थता प्रदान करता है तो वह स्वतः परमस्वास्थ्य निरामयता प्राप्त करता है । और समस्त जीवों को अभयदान देने से प्रसन्नता और प्रशंसा प्राप्त करता है । इस अहिंसा का साधक जिस प्रकार की मनोकामना करता है, अहिंसा कामधेनु की तरह समस्त मनोवाञ्छित फल देती है । अहिंसा स्वर्ग और मोक्षप्रदाती है । [2]

आचार्य हेमचन्द्र का कथन है की हिंसा का दुष्परिणाम मिलता है । लंगडापन, कोढीपन, अंगो की विकलता आदि हिंसा का दुष्परिणाम है । अतः बुद्धिमान पुरुषों को संकल्पनापूर्वक हिंसा का त्याग करना चाहिए । जैसे स्वयं को सुख प्रिय और दुःख अप्रिय है । अतः स्वंय को प्रतिकूल वर्तन अन्यों के प्रति नहीं करना चाहीए । [3]

पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और वनस्पति के जीवों की भी निरर्थक हिंसा नहीं करनी चाहिए । शरीर और कुटुम्ब के निर्वाह के लिए अनावश्यक हिंसा का यहाँ निषेध किया गया है । वस्तुतः विवेकी श्रावक शरीर एवं कुटुम्ब आदि के प्रयोजन के अतिरिक्त व्यर्थ हिंसा नहीं करता । अहिंसा महाव्रत का ज्ञाता यह जानता है कि निषिद्ध वस्तु तक ही अहिंसा धर्म सीमित नहीं है , अपितु अनिषिद्ध वस्तु में भी अहिंसा धर्म है । अतः विवेकी श्रावक धर्म को जानकर बिना प्रयोजन स्थावर जीवों की निरर्थक हिंसा नहीं करता । अतः जो शंका उठाई गई

थी कि निषिद्ध अहिंसा का आचरण अतिसूक्ष्म दृष्टि से श्रावक क्यों करे ? उसका समाधान यह है कि मुमुक्षु श्रावक निरर्थक हिंसा का आचरण कदापि न करे। जो व्यक्ति हिंसा करने में सदैव तत्पर रहता है, वह अपना सर्वस्व (धन और प्राण) त्याग कर के भी हिंसाजनित पाप से निवृत्त नहीं होता । जीव का वध करने से उत्पन्न हिंसा के पाप का निवारण पृथ्वी का दान करने पर भी नहीं हो सकता । यदि मरते हुए जीव को चाहे सुवर्ण के पर्वत या राज्य दिये जाय तो भी स्वर्णादि वस्तुओं को निरर्थक जानकर उनका स्वीकार नहीं करता । वस्तुतः वह जीने की एकमात्र एषणा रखता है । अतः समग्र दानों में अभयदान श्रेष्ठ दान है । [4]

हिंसक कि निन्दा करते हुए आचार्य कहते है, वन में निवास करने वाले व किसी के स्वामित्व की भूमि पर रहने वाले वनचारी जीव क्या कभी अपराधी हो सकते है ? वनचारी मृग परधनहरण, परधन लूट इत्यादि अपराधों से रहित होते है । वे वायु, जल और घास का सेवन करने वाले होते है । और ये तीनों चीजे दूसरे की नहीं होने से इनका भक्षण करने वाले अपराधी नहीं होते । मृग तृण, घास आदि खाकर वन में विचरण करतें है । निरपराध मृगों का वध करने में तत्पर मृगमांसलोलुप मनुष्य मांस लुब्ध कुत्ते से कम नहीं माना जाता । अर्थात् कुत्ते के समान या अधिक लोलुप है । वास्तव में, जो अपनी पीडा के समान परपीडा को नहीं जानता वह लोक में निन्दनीय समझा जाता है । पशुओं के शिकार करने के दुर्व्यसनी क्षत्रियों का पराक्रम व्यर्थ समझते है । जो अधिक बलवान होने पर भी अशरण निर्दोष और अतिनिर्बल का वध करता है, निर्दोष जीवों का प्रणान्त करता है । हिंसादि रौद्रकर्म करने वाले शिकारी अपनी जिह्वा की क्षणिक तृप्ति के लिए, जरा सी जिह्वालालसा की शान्ति के हेतु दूसरे जीवों के जन्म समाप्त कर देते है । यह भारी क्रूरता है । स्मृतिकार कहते है – वह प्राणी जिसका मांस क्रूर मनुष्य खाता है और वह क्रूर मनुष्य इन दोनों के अन्तर पर विचार करें तो एक की क्षणभर तृप्ति होती है, जबकि दूसरे के प्राणों का सर्वथा वियोग हो जाता है । यह बात अनुभवसिद्ध है । शास्त्र प्रहार से मारे जाते हुए जीव को कितना दुःख होता होगा ? [5]

आचार्य हेमचन्द्र हिंसा के फल समझाते है – हिंसानुबन्धी रौद्रध्यान परस्त सुभूमि और ब्रह्मदत्त ये दोनों चक्रवर्ती राजा सप्तम नरक में गये । हिंसा करने वाला कितना ही इन्द्रियदमन करे लेकिन वह पुण्योपार्जन नहीं कर सकता है । और नहीं पाप का प्रायश्चित कर आत्मशुद्धि प्राप्त कर सकता है । कुलपरम्परा से प्रचलित हिंसा का त्याग नहीं किया जाता तब तक इन्द्रिय मन, देव और गुरु की उपासना, दान, शास्त्रों का अध्ययन, चान्द्रायण आदि व्रत तथा धर्मानुष्ठान भी पुण्यप्राप्ति और पापक्षय रूपी फल नहीं देते । सब क्रिया निष्फल रहती है । अतः कुलपरम्परा के पालन हेतु किए जाने वाली हिंसा का निषेध किया है । [6]

आचार्य हेमचन्द्र हिंसापरक मनु के विचार की कटु आलोचना करते है । दयालु व्यक्ति कभी हिंसा का उपदेश नहीं देते अथवा हिंसा को प्रोत्साहित करने वालें शास्त्रों की रचना नहीं करते । मनु आदि श्रद्धालु भद्रजनों को हिंसा का उपदेश देकर नरक में डाल देते है । उनका उपदेश होता है, यज्ञ में होने वाली हिंसा में दोष नहीं है । यज्ञ में जिस जीव की हिंसा की जाती है उनके प्राणत्याग से जीव का बडा उपकार होता है । यज्ञीय हिंसा महोपकारिणी है । अन्य हिंसा की अपेक्षा यज्ञीय हिंसा अपकारक नहीं, उपकारक है । दर्भादि औषधियों, अजादि पशुओं, यूपादि वृक्षों, बैल, घोडा, गाय आदि पशुओं, चीडिया आदि पक्षीओं का यज्ञ में उपयोग होता है तब वह फिर देव, गन्धर्व आदि उच्चयोनि में जन्म लेता है एवं दीर्घायु प्राप्त करता है । [7]

मधुपर्क एक प्रकार का अनुष्ठान है, जिसमें गो-वध का विधि है, ज्योतिष्टोम यज्ञ जिस में पशुवध का विधान है, पितृश्राद्ध एवं दैवकर्म आदि अनुष्ठान में पशुहिंसा करना अनिवार्य है, असके अतिरिक्त कामों में पशुहिंसा पाप है । मनुस्मृति अनुसार मधुपर्क, ज्योतिष्टोम, पितृश्राद्ध एवं दैवकर्म में पशुहिंसा करने वाला वेद के तात्त्विक अर्थ का ज्ञाता विप्र स्वयं को और पशुओं को उत्तम गति प्रदान करता है। [8]

आचार्य हेमचन्द्र मनु की कटु आलोचना करते कहते है – जो व्यक्ति स्वयं हिंसा न करके हिंसा की प्रेरणा देता है, वे आस्तिकों से भी महानास्तिक है । हिंसा हिंसा में कोई अन्तर कैसे हो सकता है । विष विष में क्या कोई अन्तर होता है ? यदि यज्ञ में मारे जाने वालों को सचमुच स्वर्ग मिलता है तो याज्ञिक अपने माता, पिता या अन्य बन्धुओं को यज्ञ में होम करके स्वर्ग क्यों नहीं भेज देते ? संभव है की यज्ञ में होमा गया पशु अकाम-निर्जरा अहिंसक भावना से उत्तम गति प्राप्त कर सकता है । लेकिन याज्ञिक की उत्तम गति सम्भव नहीं है । [9]

आचार्य हेमचन्द्र चार्वाक की दंभरहिता की प्रशंसा करते है । चार्वाक नास्तिक के नाम से जगत् में प्रसिद्ध है । जैमिनी की अपेक्षा अच्छा माना जा सकता है, जैमिनी का कथन है – यज्ञ के लिए ब्रह्मा ने पशुओं की रचना की – यह केवल वाणीविलास है । सही बात यह है की सभी जीव अपने अपने कर्मानुसार शुभ-अशुभ योनि में उत्पन्न होते है । अतः ब्रह्मा द्वारा निष्पन्न सृष्टिवाद का निरूपण करना मिथ्या है । विश्व के सभी प्राणीयों की सुखशान्ति हेतु यज्ञकार्य भी व्यर्थ कथन मात्र है । वैदिकी या याज्ञिकी हिंसा हिंसा नहीं होती यह कथन उपहासपात्र है । यज्ञ हेतु नष्ट कि गई औषधि उत्तम स्थिति प्राप्त करती है, यह वचन तो समष्टि में अन्धश्रद्धा का प्रसार करता है ।

भैरव, चण्डी आदि देवताओं को बलिदान देन के लिए अथवा महानवमी, माघ-अष्टमी, चैत्र-अष्टमी, श्रावण शुक्ला एकादशी आदि पर्वों में देवपूजा के निमित्त से उपहार के रूप में वध करते है, वे नरक आदि प्राप्त करते है । आचार्यजी कहते है कि यदि घर के आंगन में अर्क में मधु मिल जाए तो पर्वत पर जाने की क्या जरूरत है । धर्मसाधन घर में स्वाधीन है तो फिर पराधीन धर्मसाधन को पकडने की क्या जरूरत है ?

इन्द्रियों पर विजयरूप शम, सुन्दर स्वभावरूप शील और जीवों पर दया - ये तीनों जिस धर्म के मूल में है, वह धर्म उन्नति का और श्रेयस का कारण है । इस प्रकार का धर्म जगत् के लिए हितकारी होता है । परन्तु खेद है कि शम, शील और दयामय धर्म का त्याग कर हिंसा को धर्मसाधन मानते है । उनसे बुद्धि की मन्दता स्पष्ट लक्षित होती है । [10]

आचार्य हेमचन्द्र लोभमूलक हिंसा, कुलपरम्परागत हिंसा, यज्ञीय हिंसा के सम्बन्ध में मनुस्मृति के तीसरे अध्याय के 6 श्लोक उद्धृत करते है । तदनुसार जो बलि चिरकाल तक और अनन्त काल दी जाने का विधान है, इन दोनों प्रकार की बलि विधिपूर्वक पितरों को दी जाय तो उनसे पूर्वजों को तृप्ति होती है । पितृतर्पण के सम्बन्ध में मनुस्मृति का कथन है – तिल, चावल, उडद, जल, कन्दमूल और फल की बलि विधिवत् देने से मनुष्यों के पूर्वज एक मास तृप्त होते है । मत्स्य-मांस की बलि देने से दो मास तक तृप्त होते है । हिरण के मांस से तीन महिने तक और क्रमशः इन्द्रिय क्षीण श्वेत अज की बलि से पूर्वजों बारह वर्ष तक संतृप्त हो जाते है । [11] आचार्यजी उनके खण्डन में कहते है कि यदि मरे हुए जीवों की इन चीजों से पुष्टि हो जाती है तो बुझे दीपक में तेल डालने से दीपक प्रकाशित हो जायेगा, लेकिन यह संभव नहीं है । हिंसा केवल दुर्गति का कारण है, जिन जीवों की हिंसा की जाती है उनसे इहलोक और परलोक में हिंसा का भय रहता है । परन्तु अहिंसक तो समस्त जीवों को अभयदान देने में शूरवीर होता है ।

आचार्य हेमचन्द्र हिंसक देवों की लोकप्रसिद्ध पूजा का खण्डन करते है – रूद्र आदि हिंसापरायण देव आज लोगों द्वारा पुष्प, फल और मद्य-मांस से पूजित होते है, उनकी हिंसकता का कारण उनके पास वाले अस्त्र-शस्त्रादि चिह्न है – धनुष्य, दण्ड, चक्र, खडग, त्रिशूल, भाला इत्यादि आयुध उनकी हिंसाकारिता प्रस्तुत करते है । धनुष्य आदि आयुध हिंसा के प्रतीक हैं । उनका शस्त्रधारण सर्वथा अनुचित है । लोक में प्रसिद्ध है कि रूद्र – धनुष्यधारी, यमराज – दण्डधारी, विष्णु – चक्रधारी, शिव – त्रिशूलधारी, कार्तिकेय – शक्तिधारी है । उपलक्षण से शस्त्रास्त्रधारी अन्य देवों के विषय में समझना चाहिए । [12]

कलिकालसर्वज्ञ आचार्य हेमचन्द्र अहिंसा महाव्रत का मातृवत् महिमा बताकर वंदना करते है । अहिंसा को कामधेनु कि उपमा देते है, जो अहिंसा परमोधर्मः की उदात्त भावना को विश्वमंगल्यमयी बनाने का प्रयास करते है ।

संदर्भ-सूचि::

1. यो.शा. 50-51
2. यो.शा. 52
3. यो.शा. 19-20
4. यो.शा. 21-22
5. यो.शा. 23-26
6. यो.शा. 27-31
7. यो.शा. 32-34
8. यो.शा. 34-36
9. यो.शा. 37
10. यो.शा. 38-40
11. यो.शा. 41-46
12. यो.शा. 47-49

संदर्भग्रन्थ:

1. योगशास्त्र (कलिकालसर्वज्ञ हेमचन्द्राचार्यरचित स्वोपज्ञ व्याख्या सहित) हिन्दी अनुवाद – मुनिश्री पद्मविजयजी, सं.पं. मुनिश्री नेमिचन्द्रजी, प्रकाशक – श्री निर्ग्रन्थ साहित्य प्रकाशन संघ, दिल्ली, वर्ष - 1975
2. योगशास्त्र (कलिकालसर्वज्ञ हेमचन्द्राचार्यरचित)हिन्दी अनुवाद – पं. शोभाचन्द्र भारिल्ल, सं. मुनिश्री समदर्शी, प्रभाकर, प्रकाशक –

ऋषभचन्द्र जौहरी, दिल्ली, वर्ष - 1963

3. योगशास्त्र (भाग-1) (श्रीमद् हेमचन्द्राचार्यरचित)विवेचनकार – मुनिश्री यशोभद्र विजयजी महाराज, प्रकाशक – श्री वल्लभ विजय मिशन, लुधियाना, वर्ष – 1985

4. आचार्य हेमचन्द्र और उनका शब्दानुशासन एक अध्ययन ले. डो. नेमिचन्द्र शास्त्री, प्रकाशक – चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी, द्वि.सं. 2000

5. आचार्य हेमचन्द्ररचित देशी नाममाला का भाषावैज्ञानिक अध्ययन ले. डो. शिवमूर्ति शर्मा, प्रकाशक – देवनागर प्रकाशन, जयपुर, वर्ष – 1980

6. हेमचन्द्र के धातु पारायण का समालोचनात्मक अध्ययन ले. डो. अनुपमा सेठ, प्रकाशक – नाग पब्लिशर्स, दिल्ली, प्र.सं. 2002

7. काव्यानुशासनम् (आचार्य हेमचन्द्र) हिन्दीव्याकार – डो. रामानन्द शर्मा, प्रकाशक – कृष्णदास अकादमी, वाराणसी, प्र.सं. वि.सं. 2056

8. Haim – Prapa (A Journal of the Hemchandracharya samaroha, Patan) (Vol. I-II) Hemchandracharya North Gujarat University, Patan, Year – 2007-2008

****

प्रा. डो. विष्णुकुमार डी. पुरोहित

अध्यक्ष, संस्कृत विभाग, गवर्नमेन्ट आर्ट्स कोलेज, गांधीनगर (गुजरात)

Mobile – 8460463872, Email : vishnukumar.purohit@gmail.com

Copyright © 2012 - 2016 KCG. All Rights Reserved. | Powered By : Prof. Hasmukh Patel